E-ISSN: 2706-8927
P-ISSN: 2706-8919
www.allstudyjournal.com
IJAAS 2023; 5(4): 88-91
Received: 09-03-2023
Accepted: 11-06-2023

Kirti Kumari
Research Scholar, Department of History, Malwanchal University, Indore, Madhya Pradesh, India

Dr. Rathod Duryodhan Devisingh
Supervisor, Professor, Department of History, Malwanchal University, Indore, Madhya Pradesh, India

Corresponding Author:
Kirti Kumari
Research Scholar, Department of History, Malwanchal University, Indore, Madhya Pradesh, India

आधुनिक भारत के विकास में स्वामी विवेकानंद के सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की भूमिका

Kirti Kumari and Rathod Duryodhan Devisingh

DOI: https://www.doi.org/10.33545/27068919.2023.v5.i4a.1702

सारांश

स्वामी विवेकानंद का सांस्कृतिक राष्ट्रवाद आधुनिक भारत के लिए प्रेरक और मार्गदर्शक दृष्टि प्रस्तुत करता है। उन्होंने यह प्रतिपादित किया कि भारत की आत्मा उसकी संस्कृति और अध्यात्म में निहित है, जो वेदांत और अद्वैत दर्शन पर आधारित है। उन्नीसवीं शताब्दी के सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक संकटों के बीच विवेकानंद ने आत्मगौरव, आत्मनिर्भरता और राष्ट्रीय एकता का संदेश दिया। उनका राष्ट्रवाद केवल राजनीतिक स्वतंत्रता तक सीमित न होकर सामाजिक सुधार, महिला शिक्षा, अस्पृश्यता उन्मूलन और युवा शक्ति के जागरण पर केंद्रित था। उन्होंने शिक्षा को राष्ट्र निर्माण का मूल साधन माना और भारतीय संस्कृति की श्रेष्ठता को विश्व पटल पर स्थापित किया। आज के भारत में, जहां वैश्वीकरण, सांस्कृतिक विघटन और नैतिक संकट जैसी चुनौतियाँ हैं, विवेकानंद का सांस्कृतिक राष्ट्रवाद हमें हमारी जड़ों से जोड़ते हुए आधुनिकता की ओर बढ़ने की प्रेरणा देता है। उनकी दृष्टि भारत को सशक्त, समरस और आत्मविश्वासी राष्ट्र बनाने की दिशा में आज भी प्रासंगिक है।

शब्द-कुंजी : स्वामी विवेकानंद, सांस्कृतिक राष्ट्रवाद, वैश्वीकरण, उपभोक्तावाद और सांस्कृतिक संकट

प्रस्तावना

भारत का सांस्कृतिक राष्ट्रवाद अपनी जड़ों में गहराई से आध्यात्मिक और नैतिक मूल्यों से ओत-प्रोत है, जिसका सर्वाधिक सशक्त स्वर स्वामी विवेकानंद के चिंतन में प्रतिफलित होता है । उन्नीसवीं शताब्दी का भारत सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक विघटन से गुजर रहा था, जहां एक ओर औपनिवेशिक दमन और पाश्चात्य प्रभाव के कारण भारतीय समाज अपनी अस्मिता खोता जा रहा था, वहीं दूसरी ओर जाति-पांति, अस्पृश्यता, अंधविश्वास और रूढ़िवादी प्रथाओं ने समाज को जकड़ रखा था । ऐसे संकटपूर्ण समय में स्वामी विवेकानंद का प्रादुर्भाव हुआ, जिन्होंने भारतीय संस्कृति और अध्यात्म को पुनः जागृत कर उसे राष्ट्रीय चेतना से जोड़ दिया । 1893 में शिकागो धर्मसभा में उनके ऐतिहासिक भाषण ने न केवल भारत की आध्यात्मिक श्रेष्ठता को विश्व पटल पर स्थापित किया, बल्कि भारतीय जनमानस में आत्मगौरव और आत्मविश्वास का संचार भी किया । विवेकानंद का राष्ट्रवाद केवल राजनीतिक स्वतंत्रता तक सीमित नहीं था, बल्कि वह एक व्यापक सांस्कृतिक दृष्टिकोण था जिसमें मानवता, आध्यात्मिकता और सामाजिक सुधार की प्रमुख भूमिका थी । उनके विचार में भारत का भविष्य वेदांत और अद्वैत दर्शन पर आधारित सांस्कृतिक पुनर्जागरण में निहित था, जो समता, भाईचारा और आत्मनिर्भरता को केंद्र में रखता है । उन्होंने शिक्षा को राष्ट्र निर्माण का प्रमुख साधन बताया और युवाशक्ति को समाज परिवर्तन का अग्रदूत माना । महिला शिक्षा, अस्पृश्यता उन्मूलन और सामाजिक समरसता पर उनके विचार आज भी उतने ही प्रासंगिक हैं जितने उस समय थे । आधुनिक भारत, जहां वैश्वीकरण, उपभोक्तावाद और सांस्कृतिक संकट जैसी चुनौतियाँ सामने हैं, वहां विवेकानंद का सांस्कृतिक राष्ट्रवाद हमें प्रेरित करता है कि हम अपने मूल्यों और परंपराओं को आत्मसात करते हुए आधुनिकता की ओर बढ़ें । उनका संदेश केवल धार्मिक या आध्यात्मिक चेतना तक सीमित नहीं है, बल्कि यह सामाजिक-आर्थिक सशक्तिकरण, नैतिक उत्थान और राष्ट्रीय एकता की दिशा में मार्गदर्शन करता है । इस दृष्टि से स्वामी विवेकानंद का सांस्कृतिक राष्ट्रवाद आधुनिक भारत के लिए एक प्रेरक दृष्टि है, जो न केवल हमारी सांस्कृतिक पहचान को सुदृढ़ करता है, बल्कि हमें विश्व परिवार में अपनी विशिष्ट भूमिका निभाने की क्षमता भी प्रदान करता है ।

शोध का उद्देश्य

इस शोध का उद्देश्य स्वामी विवेकानंद के सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की मूल अवधारणा को स्पष्ट करना और उसके आधुनिक भारत के संदर्भ में प्रासंगिक महत्व का विश्लेषण करना है । विवेकानंद ने जिस राष्ट्रवाद की परिकल्पना की, वह केवल राजनीतिक स्वतंत्रता तक सीमित न होकर सांस्कृतिक पुनर्जागरण, सामाजिक सुधार और आध्यात्मिक उत्थान पर आधारित था । इस

शोध का प्रमुख लक्ष्य यह समझना है कि विवेकानंद द्वारा प्रतिपादित वेदांत दर्शन, अद्वैतवाद और मानवीय मूल्यों ने भारतीय समाज में आत्मगौरव, आत्मनिर्भरता और समरसता की भावना कैसे उत्पन्न की। साथ ही यह भी उद्देश्य है कि उनके विचारों का आधुनिक भारत में शिक्षा, महिला सशक्तिकरण, अस्पृश्यता उन्मूलन और युवा चेतना के क्षेत्र में क्या योगदान हो सकता है। वर्तमान समय में वैश्वीकरण और सांस्कृतिक संकट जैसी चुनौतियों के बीच यह अध्ययन यह स्थापित करना चाहता है कि विवेकानंद का सांस्कृतिक राष्ट्रवाद आज भी एक प्रेरक दृष्टि प्रदान करता है, जो भारत के सर्वांगीण विकास हेतु मार्गदर्शक सिद्ध हो सकता है।

भारतीय राष्ट्रवाद की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

भारतीय राष्ट्रवाद का उदय एक लम्बी ऐतिहासिक प्रक्रिया का परिणाम है, जो सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक परिस्थितियों से गहराई से प्रभावित रहा । प्राचीन काल से ही भारत विभिन्न जातीय, भाषायी और सांस्कृतिक विविधताओं के बावजूद एक सांस्कृतिक एकता से बंधा रहा, जिसका आधार वेद, उपनिषद, गीता और बौद्ध-जैन दर्शन जैसे आध्यात्मिक विचार रहे। मध्यकाल में भक्ति और सूफी आंदोलनों ने धार्मिक समरसता और जनजागरण का कार्य किया, जिसने भारतीय जनमानस में एक साझा सांस्कृतिक चेतना का निर्माण किया । किन्तु औपनिवेशिक शासन के आगमन के बाद भारत की आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक संरचना बुरी तरह प्रभावित हुई । अंग्रेज़ों की विभाजनकारी नीतियों, शोषण और पाश्चात्य शिक्षा प्रणाली ने एक ओर जहाँ भारतीय समाज को हीनभावना से ग्रसित किया, वहीं दूसरी ओर एक नए मध्यवर्ग का उदय हुआ, जिसने राष्ट्रवाद की चेतना को जन्म दिया।

अठारहवीं और उन्नीसवीं शताब्दी के सुधार आंदोलनों – जैसे राजा राममोहन राय का ब्रह्म समाज, स्वामी दयानंद सरस्वती का आर्य समाज और ईश्वरचंद्र विद्यासागर के सामाजिक सुधार – ने सामाजिक जागरण और नवचेतना का वातावरण तैयार किया। इसी पृष्ठभूमि में 1885 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना हुई, जिसने संगठित राजनीतिक आंदोलन का मार्ग प्रशस्त किया । प्रारंभिक राष्ट्रवाद उदारवादी और याचिकात्मक स्वरूप में था, परंतु धीरे-धीरे यह उग्र राष्ट्रवाद और स्वराज की मांग में परिवर्तित हुआ । बाल गंगाधर तिलक, लाला लाजपत राय और बिपिनचंद्र पाल जैसे नेताओं ने "स्वराज मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है" का उद्घोष किया । महात्मा गांधी ने सत्याग्रह और अहिंसा के माध्यम से राष्ट्रवाद को जनांदोलन का स्वरूप प्रदान किया। इस प्रकार भारतीय राष्ट्रवाद की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि सांस्कृतिक जागरण, सामाजिक सुधार, धार्मिक पुनर्जागरण और राजनीतिक चेतना का संगम रही, जिसने भारतीय स्वतंत्रता संग्राम को वैचारिक और संगठनात्मक आधार प्रदान किया । यह राष्ट्रवाद केवल राजनीतिक स्वतंत्रता का आंदोलन नहीं था, बल्कि सांस्कृतिक अस्मिता और राष्ट्रीय गौरव की पुनर्स्थापना का भी प्रयास था।

स्वामी विवेकानंद का उभरना एक राष्ट्रीय चेतना के प्रतिनिधि के रूप में

उन्नीसवीं शताब्दी का भारत राजनीतिक गुलामी, सामाजिक विघटन और सांस्कृतिक हीनभावना से ग्रसित था। अंग्रेज़ी शिक्षा और पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव ने भारतीय समाज को अपनी जड़ों से विमुख करना शुरू कर दिया था, वहीं दूसरी ओर जाति-पांति, अस्पृश्यता, धार्मिक कट्टरता और सामाजिक कुरीतियाँ राष्ट्र की प्रगति में बाधा बन रही थीं। ऐसे समय में स्वामी विवेकानंद का उदय हुआ, जिन्होंने भारतीय संस्कृति और अध्यात्म की शक्ति को पुनः जागृत कर उसे राष्ट्रीय चेतना से जोड़ा। विवेकानंद ने वेदांत और अद्वैत दर्शन के माध्यम से यह प्रतिपादित किया कि प्रत्येक मानव में दिव्यता निहित है और समता ही राष्ट्र की वास्तविक शक्ति है। 1893 में शिकागो धर्मसभा में उनके ऐतिहासिक भाषण ने न केवल पश्चिमी जगत को भारत की आध्यात्मिक महिमा से परिचित कराया, बल्कि भारतीयों के भीतर भी आत्मगौरव और आत्मविश्वास का संचार किया। उन्होंने शिक्षा को समाज और राष्ट्र निर्माण का प्रमुख साधन माना तथा युवाओं को राष्ट्र की शक्ति और भविष्य का प्रतीक बताया । उनके विचारों ने महिला शिक्षा, अस्पृश्यता उन्मूलन और सामाजिक समरसता की दिशा में नई चेतना जगाई। विवेकानंद का व्यक्तित्व और विचार उस समय भारतीय जनमानस के लिए प्रेरणास्रोत बने, जिसने स्वतंत्रता संग्राम के वैचारिक आधार को सुदृढ़ किया। इस प्रकार स्वामी विवेकानंद केवल एक धार्मिक या दार्शनिक चिंतक नहीं, बल्कि आधुनिक भारत में राष्ट्रीय चेतना के सशक्त प्रतिनिधि के रूप में उभरे, जिनकी प्रेरणा आज भी राष्ट्र के विकास और सांस्कृतिक पुनर्निर्माण में प्रासंगिक बनी हुई है।

सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की संकल्पना

राष्ट्रवाद एक ऐसी चेतना है जो किसी राष्ट्र के लोगों में एकता, आत्मगौरव और सामूहिक पहचान की भावना उत्पन्न करती है। इसके विभिन्न आयाम होते हैं, जैसे राजनीतिक राष्ट्रवाद, जो स्वतंत्रता और स्वशासन की आकांक्षा पर आधारित होता है; धार्मिक राष्ट्रवाद, जो किसी विशेष धार्मिक विचारधारा को राष्ट्र की पहचान के रूप में देखता है; और सांस्कृतिक राष्ट्रवाद, जो राष्ट्र की आत्मा को उसकी संस्कृति, परंपराओं और आध्यात्मिक मूल्यों में निहित मानता है। भारतीय संदर्भ में सांस्कृतिक राष्ट्रवाद का विशेष महत्व है क्योंकि भारत की पहचान केवल भौगोलिक या राजनीतिक सीमाओं से नहीं, बल्कि उसकी प्राचीन सांस्कृतिक धरोहर, विविध परंपराओं, आध्यात्मिक चिंतन और समरसता की भावना से निर्मित हुई है। भारतीय संस्कृति का आधार वेदांत, उपनिषद, गीता और अद्वैत दर्शन है, जिसने यह प्रतिपादित किया कि समस्त मानव जाति एक ही चेतना के विविध रूप हैं। यही विचार भारतीय राष्ट्रवाद को व्यापक और सर्वसमावेशी बनाता है। स्वामी विवेकानंद के चिंतन में सांस्कृतिक राष्ट्रवाद का स्वर अत्यंत स्पष्ट रूप से प्रकट होता है। उनके अनुसार भारत का राष्ट्रवाद केवल राजनीतिक स्वतंत्रता की माँग नहीं है, बल्कि यह आत्मगौरव, आत्मनिर्भरता और नैतिक-आध्यात्मिक उत्थान पर आधारित है। उन्होंने यह कहा कि भारत की आत्मा धर्म और संस्कृति में निहित है, और जब तक हम अपनी सांस्कृतिक जड़ों को नहीं पहचानेंगे, तब तक सच्चा राष्ट्रवाद विकसित नहीं हो सकता। उनके विचार में धर्म केवल पूजा-पाठ तक सीमित नहीं था, बल्कि मानवता की सेवा और समता की स्थापना ही धर्म का वास्तविक स्वरूप है। इसीलिए उन्होंने "दरिद्र नारायण सेवा" और "नर सेवा ही नारायण सेवा" का संदेश दिया, जिसने धर्म और राष्ट्र को जोड़कर एक सामाजिक एवं सांस्कृतिक चेतना का निर्माण किया। विवेकानंद मानते थे कि भारत का पुनर्जागरण तभी संभव है जब उसके लोग अपनी संस्कृति और आध्यात्मिकता पर गर्व करें और उसे जीवन में आत्मसात करें। उन्होंने यह भी स्पष्ट किया कि पश्चिमी भौतिकवाद और भारतीय आध्यात्मिकता का समन्वय ही आधुनिक भारत को सशक्त बना सकता है । इस प्रकार विवेकानंद का सांस्कृतिक राष्ट्रवाद धर्म, संस्कृति और राष्ट्र को एक सूत्र में पिरोता है, जो न केवल भारतीय समाज को एकता और समरसता प्रदान करता है, बल्कि आधुनिक भारत के लिए प्रेरक दृष्टि भी बनता है। यह संकल्पना आज भी प्रासंगिक है क्योंकि वैश्वीकरण और सांस्कृतिक विघटन के दौर में यह हमें हमारी जड़ों से जोड़कर राष्ट्रीय अस्मिता और आत्मविश्वास को पुनर्जीवित करने का मार्ग दिखाती है।

स्वामी विवेकानंद की दृष्टि में राष्ट्रवाद के आधार

स्वामी विवेकानंद की दृष्टि में राष्ट्रवाद के आधार गहरे सांस्कृतिक, आध्यात्मिक और मानवीय मूल्यों से जुड़े हुए हैं, जिनका उद्देश्य केवल राजनीतिक स्वतंत्रता प्राप्त करना नहीं था, बल्कि समाज के सर्वांगीण विकास और आत्मिक जागरण के माध्यम से एक सशक्त और समरस राष्ट्र का निर्माण करना था। उनके विचार में राष्ट्र की वास्तविक शक्ति आध्यात्मिकता और मानवता में निहित है, क्योंकि वे मानते थे कि भारत की आत्मा धर्म और अध्यात्म से पोषित हुई है । उनके अनुसार, यदि समाज में आध्यात्मिक चेतना जागृत होगी तो वह अपने कर्तव्यों के प्रति सजग और मानवता के प्रति संवेदनशील बनेगा। उन्होंने वेदांत और अद्वैत दर्शन को राष्ट्र निर्माण की आधारशिला माना, क्योंकि अद्वैत का सिद्धांत यह प्रतिपादित करता है कि समस्त मानवता एक है और सभी में समान दिव्यता विद्यमान है। यह विचार सामाजिक समरसता और एकता की भावना को जन्म

देता है, जो एक सुदृढ़ राष्ट्र के लिए अनिवार्य है । शिक्षा, युवाशक्ति और आत्मनिर्भरता को विवेकानंद ने विशेष महत्व दिया । उनके अनुसार शिक्षा केवल पुस्तकीय ज्ञान तक सीमित नहीं होनी चाहिए, बल्कि वह चरित्र निर्माण, आत्मबल और राष्ट्र के प्रति कर्तव्य भावना को विकसित करने वाली होनी चाहिए । उन्होंने युवाओं को राष्ट्र का वास्तविक भविष्य बताया और उन्हें आत्मविश्वासी, कर्मठ और आत्मनिर्भर बनने की प्रेरणा दी । उनके विचार में यदि युवाशक्ति सही दिशा में संगठित हो जाए तो वह भारत को पुनः विश्वगुरु बना सकती है । समाज सुधार के क्षेत्र में भी विवेकानंद ने महत्वपूर्ण दृष्टिकोण प्रस्तुत किया । उन्होंने जाति-पाति और अस्पृश्यता जैसी कुरीतियों का कड़ा विरोध किया और समाज में समता और भाईचारे की भावना को आवश्यक बताया । महिला शिक्षा और महिला सशक्तिकरण को उन्होंने राष्ट्र की प्रगति का अनिवार्य तत्व माना, क्योंकि उनके अनुसार स्त्रियों के बिना समाज का आधा हिस्सा निष्क्रिय रहता है और राष्ट्र पूर्ण रूप से विकसित नहीं हो सकता । इस प्रकार विवेकानंद का राष्ट्रवाद केवल राजनीतिक स्वतंत्रता पर आधारित नहीं था, बल्कि वह एक ऐसा समग्र दृष्टिकोण था जिसमें आध्यात्मिकता, अद्वैत दर्शन, शिक्षा, युवाशक्ति, आत्मनिर्भरता और समाज सुधार सभी का समन्वय था । उनका राष्ट्रवाद मानवीय मूल्यों और सामाजिक न्याय पर आधारित था, जो आज भी भारतीय समाज और आधुनिक राष्ट्र निर्माण के लिए प्रेरणादायक और मार्गदर्शक बना हुआ है ।

साहित्य समीक्षा

गोलवलकर, एम. एस. (2005) [1]. इसमें राष्ट्रवाद को केवल राजनीतिक दृष्टिकोण से नहीं, बल्कि सांस्कृतिक, धार्मिक और सामाजिक धारा के रूप में देखते हैं । उनके अनुसार भारत की राष्ट्रीय अस्मिता हिंदू संस्कृति और मूल्यों पर आधारित है, जो समाज के सभी वर्गों को एक सूत्र में बांधने की शक्ति रखती है । गोलवलकर मानते थे कि भारत की आत्मा हिंदू धर्म के जीवन दृष्टिकोण में निहित है, जिसमें सहिष्णुता, समरसता और आध्यात्मिकता के साथ-साथ राष्ट्र के प्रति गहरी आस्था शामिल है । इस पुस्तक में "पुरुषवादी हिंदू धर्म" की अवधारणा भी सामने आती है, जिसके तहत वे राष्ट्र की शक्ति और संरक्षण को पुरुषत्व से जोड़ते हैं । समकालीन हिंदुत्व को वे एक सांस्कृतिक आंदोलन के रूप में व्याख्यायित करते हैं, जिसका उद्देश्य भारत की प्राचीन सांस्कृतिक धरोहर और आध्यात्मिक आदर्शों को जीवित रखना है । इस ग्रंथ में गोलवलकर राष्ट्रवाद को सामाजिक एकता, धार्मिक चेतना और सांस्कृतिक गौरव से जोड़ते हैं, जो भारतीय राष्ट्र की आत्मा को सशक्त करने का मार्ग प्रस्तुत करता है ।

सिल, एन. पी. (2004) [2]. विवेकानंद जहाँ सांस्कृतिक और आध्यात्मिक राष्ट्रवाद के प्रवक्ता थे, वहीं बंकिमचंद्र ने साहित्य और धर्म के माध्यम से राष्ट्रवादी चेतना को प्रबल किया । इस शोध में सिल विवेकानंद के उस दृष्टिकोण को उजागर करते हैं, जिसमें राष्ट्र का उत्थान आत्मगौरव, वेदांतिक दर्शन और सामाजिक सुधार से संभव माना गया, जबकि बंकिमचंद्र ने "वंदे मातरम्" जैसे राष्ट्रगीत के माध्यम से जनमानस में राजनीतिक स्वतंत्रता और राष्ट्रीय गौरव की भावना को जगाया । दोनों ही चिंतकों ने राष्ट्रवाद को आध्यात्मिक और सांस्कृतिक धरातल पर प्रस्तुत किया, परंतु उनकी कार्यपद्धति और अभिव्यक्ति अलग-अलग रही । विवेकानंद का जोर आत्मनिर्भरता, शिक्षा और युवा शक्ति पर था, जबकि बंकिमचंद्र ने साहित्यिक सृजन और धार्मिक प्रतीकों के माध्यम से जनचेतना का निर्माण किया । सिल का विश्लेषण यह दर्शाता है कि दोनों ही विचारकों ने भारतीय राष्ट्रवाद के वैचारिक आधार को सशक्त किया और उनके योगदान ने स्वतंत्रता संग्राम की पृष्ठभूमि तैयार करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई ।

पालित, पी. के. (2022) [3]. इसमें विवेकानंद को केवल एक धार्मिक संत के रूप में नहीं, बल्कि आधुनिक भारत के सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक जीवन के प्रेरणास्रोत के रूप में प्रस्तुत किया गया है । पालित विवेकानंद के वेदांत और अद्वैत दर्शन पर बल देते हैं, जिन्हें उन्होंने राष्ट्र निर्माण का आधार बताया । वे यह भी स्पष्ट करते हैं कि विवेकानंद का राष्ट्रवाद केवल धार्मिक या आध्यात्मिक नहीं था, बल्कि उसमें सामाजिक सुधार, महिला सशक्तिकरण, शिक्षा और युवाओं की भूमिका जैसे व्यावहारिक पहलू भी शामिल थे । इस पुस्तक में विवेकानंद के वैश्विक दृष्टिकोण को भी रेखांकित किया गया है, जिसमें उन्होंने पश्चिमी विज्ञान और भौतिक प्रगति को भारतीय अध्यात्म से जोड़ने की आवश्यकता बताई । पालित का मानना है कि विवेकानंद की दृष्टि आज भी उतनी ही प्रासंगिक है क्योंकि यह आधुनिक भारत को सांस्कृतिक आत्मगौरव, नैतिक शक्ति और सामाजिक एकता की ओर प्रेरित करती है । इस प्रकार यह कृति विवेकानंद को आधुनिक भारतीय विचारधारा का पुनर्निर्माता सिद्ध करती है ।

शर्मा, एस., और सचदेवा, जी. (2016) [4]. यह अध्ययन स्वामी विवेकानंद को एक राजनीतिक विचारक के रूप में प्रस्तुत करता है और समकालीन विश्व में उनकी प्रासंगिकता को रेखांकित करता है । यद्यपि विवेकानंद को मुख्यतः धार्मिक और आध्यात्मिक चिंतक माना जाता है, परंतु उनके विचारों में राजनीतिक राष्ट्रवाद की स्पष्ट झलक मिलती है । उन्होंने राष्ट्र को केवल राजनीतिक सत्ता का ढांचा न मानकर एक सांस्कृतिक और नैतिक इकाई के रूप में देखा । इस लेख में यह दर्शाया गया है कि विवेकानंद ने युवाओं को राष्ट्र निर्माण की सबसे बड़ी शक्ति माना और शिक्षा, आत्मनिर्भरता तथा सामाजिक समरसता के माध्यम से राष्ट्र की प्रगति का मार्ग प्रशस्त किया । लेखकों का तर्क है कि आज की वैश्विक दुनिया, जहाँ सांस्कृतिक विघटन, नैतिक पतन और सामाजिक असमानताएँ बढ़ रही हैं, विवेकानंद के विचार और अधिक प्रासंगिक हो गए हैं । उनका जोर आत्मगौरव, आध्यात्मिकता और मानवीय मूल्यों पर था, जो न केवल भारत बल्कि संपूर्ण मानव समाज के लिए प्रेरणा का स्रोत हैं । यह अध्ययन विवेकानंद को राजनीतिक दर्शन और व्यावहारिक राष्ट्रवाद के एक महत्वपूर्ण चिंतक के रूप में स्थापित करता है ।

प्रभानंद, एस. (2003) [11]. इसमें विवेकानंद के जीवन की प्रमुख घटनाओं, उनकी शिक्षा और उनके गुरु रामकृष्ण परमहंस से प्राप्त आध्यात्मिक प्रेरणा पर प्रकाश डाला गया है । लेखक ने विवेकानंद के राष्ट्रवादी विचारों को विशेष रूप से रेखांकित किया है, जिसमें उन्होंने भारतीय संस्कृति और अध्यात्म को राष्ट्र निर्माण का आधार बताया । प्रभानंद यह स्पष्ट करते हैं कि विवेकानंद ने वेदांत और अद्वैत दर्शन को केवल दार्शनिक चिंतन तक सीमित नहीं रखा, बल्कि उसे सामाजिक परिवर्तन और राष्ट्रीय चेतना से जोड़ा । शिकागो धर्मसभा (1893) में उनके ऐतिहासिक भाषण ने भारत की आध्यात्मिक महिमा को वैश्विक मंच पर स्थापित किया और भारतीय जनमानस में आत्मगौरव का संचार किया । यह लेख विवेकानंद को केवल एक धार्मिक प्रवक्ता नहीं, बल्कि आधुनिक भारत के सांस्कृतिक पुनर्जागरण और राष्ट्रवाद के सशक्त प्रवक्ता के रूप में प्रस्तुत करता है । प्रभानंद का निष्कर्ष है कि विवेकानंद के विचार आज भी उतने ही जीवंत और प्रासंगिक हैं, जितने उनके जीवनकाल में थे ।

भारतीय संविधान और सांस्कृतिक मूल्यों में विवेकानंद के विचारों की झलक

भारतीय संविधान को केवल एक राजनीतिक दस्तावेज़ न मानकर यदि हम उसे सांस्कृतिक और नैतिक दृष्टि से देखें, तो उसमें स्वामी विवेकानंद के विचारों की गहरी छाप स्पष्ट दिखाई देती है । संविधान की मूल भावना "हम भारत के लोग" से प्रारंभ होकर समानता, स्वतंत्रता, बंधुत्व और न्याय के आदर्शों तक जाती है, जो वस्तुतः विवेकानंद के सांस्कृतिक राष्ट्रवाद और वेदांतिक दृष्टि से मेल खाते हैं । विवेकानंद ने अद्वैत दर्शन पर बल देते हुए कहा था कि प्रत्येक मानव में दिव्यता निहित है, अतः सभी को समान अधिकार और अवसर मिलने चाहिए । यही विचार संविधान के अनुच्छेदों में समता और समानता के अधिकार के रूप में प्रकट होता है । उन्होंने अस्पृश्यता और जातिगत भेदभाव का विरोध किया था, जिसकी झलक संविधान में छुआछूत उन्मूलन (अनुच्छेद 17) और समान नागरिक अधिकारों के प्रावधान में दिखाई देती है । विवेकानंद ने महिला शिक्षा और सशक्तिकरण को राष्ट्र की प्रगति के लिए अनिवार्य माना था, जो संविधान में लैंगिक समानता और महिला अधिकारों की गारंटी के रूप में स्थापित हुआ । उनकी यह मान्यता कि शिक्षा का उद्देश्य केवल ज्ञानार्जन नहीं, बल्कि चरित्र निर्माण और आत्मनिर्भरता है, आज संविधान की प्रस्तावना में "न्याय" और "गरिमा" के मूल्य तथा शिक्षा के अधिकार (अनुच्छेद 21A) में प्रतिफलित होती

है। उन्होंने धर्म को संकीर्णता से मुक्त कर मानवता और सेवा से जोड़ा था, जो संविधान के धर्मनिरपेक्ष स्वरूप में परिलक्षित होता है, जहाँ सभी धर्मों को समान मान्यता और सम्मान दिया गया है। इस प्रकार भारतीय संविधान की मूल संरचना–समानता, स्वतंत्रता, बंधुत्व, न्याय और धर्मनिरपेक्षता–स्वामी विवेकानंद की उस सांस्कृतिक दृष्टि की झलक है, जो भारत को एक समरस, सशक्त और नैतिक आधारों पर खड़ा राष्ट्र बनाने का स्वप्न देखती थी।

आधुनिक भारत में नैतिक, आध्यात्मिक और सांस्कृतिक पुनर्जागरण की आवश्यकता

आधुनिक भारत अभूतपूर्व परिवर्तन और चुनौतियों के दौर से गुजर रहा है। विज्ञान और प्रौद्योगिकी की तीव्र प्रगति, वैश्वीकरण और उपभोक्तावाद ने जहाँ भौतिक जीवन को सुविधाजनक बनाया है, वहीं नैतिक मूल्यों का ह्रास, सामाजिक असमानताएँ, सांस्कृतिक विघटन और जीवन-दृष्टि की संकीर्णता जैसी समस्याएँ भी उत्पन्न की हैं। आज समाज में भ्रष्टाचार, हिंसा, लालच, नैतिक पतन और आत्मकेंद्रितता का बढ़ना स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। ऐसी स्थिति में केवल भौतिक प्रगति पर्याप्त नहीं है, बल्कि राष्ट्र और समाज को स्थायी शक्ति प्रदान करने के लिए नैतिक, आध्यात्मिक और सांस्कृतिक पुनर्जागरण की अत्यंत आवश्यकता है। भारत की शक्ति सदैव उसकी संस्कृति और अध्यात्म में निहित रही है, जिसने विश्व को सहिष्णुता, समरसता, करुणा और मानवता का संदेश दिया है। स्वामी विवेकानंद जैसे चिंतकों ने स्पष्ट किया था कि जब तक व्यक्ति और समाज अपने भीतर आत्मगौरव, आत्मबल और नैतिक चरित्र का विकास नहीं करेंगे, तब तक सच्ची प्रगति संभव नहीं है। आधुनिक भारत के लिए आवश्यक है कि शिक्षा केवल ज्ञानार्जन तक सीमित न होकर चरित्र निर्माण, जिम्मेदारी और सामाजिक चेतना का संवाहक बने। साथ ही युवाशक्ति को नैतिक आदर्शों और सांस्कृतिक मूल्यों से जोड़कर उन्हें राष्ट्रनिर्माण में सक्रिय भागीदार बनाना होगा। महिला सशक्तिकरण, अस्पृश्यता उन्मूलन और सामाजिक समरसता की दिशा में भी पुनर्जागरण अनिवार्य है। यदि भारत अपने प्राचीन सांस्कृतिक मूल्यों को आधुनिकता से जोड़कर आत्मसात करता है तो वह न केवल आंतरिक संकटों से उबर सकेगा, बल्कि विश्व परिवार में नैतिक और आध्यात्मिक नेतृत्व की भूमिका निभाने में भी सक्षम होगा। इस प्रकार आधुनिक भारत के लिए नैतिक, आध्यात्मिक और सांस्कृतिक पुनर्जागरण केवल विकल्प नहीं, बल्कि राष्ट्रीय पुनर्निर्माण और सर्वांगीण विकास का आधार है।

निष्कर्ष

स्वामी विवेकानंद का सांस्कृतिक राष्ट्रवाद आधुनिक भारत के लिए एक ऐसी प्रेरक दृष्टि प्रस्तुत करता है, जो राष्ट्र को केवल राजनीतिक स्वतंत्रता तक सीमित न रखकर सामाजिक, आध्यात्मिक और नैतिक मूल्यों पर आधारित समग्र विकास की ओर ले जाती है। उन्होंने यह स्पष्ट किया कि भारत की आत्मा उसकी संस्कृति और अध्यात्म में निहित है, और जब तक हम अपने मूल्यों और परंपराओं को आत्मसात नहीं करेंगे, तब तक वास्तविक राष्ट्रनिर्माण संभव नहीं है। उनके विचारों में वेदांत और अद्वैत दर्शन की वह शक्ति निहित है, जो समता, भाईचारे और मानवता की भावना को प्रोत्साहित करती है। विवेकानंद ने शिक्षा को चरित्र निर्माण और आत्मनिर्भरता का माध्यम माना तथा युवाशक्ति को राष्ट्र की वास्तविक शक्ति बताया। उन्होंने महिला शिक्षा, अस्पृश्यता उन्मूलन और समाज सुधार को राष्ट्रवाद का अनिवार्य हिस्सा मानते हुए यह स्थापित किया कि राष्ट्र तभी सशक्त होगा जब हर वर्ग समान अवसर और सम्मान प्राप्त करेगा। उनके चिंतन ने यह भी स्पष्ट किया कि पश्चिम की भौतिक प्रगति और भारत की आध्यात्मिक धरोहर का समन्वय ही आधुनिक भारत को एक सशक्त और आदर्श राष्ट्र बना सकता है। आज जब भारत वैश्वीकरण, सांस्कृतिक संकट और नैतिक पतन जैसी चुनौतियों का सामना कर रहा है, तब विवेकानंद का सांस्कृतिक राष्ट्रवाद हमें हमारी जड़ों से जोड़े रखने, आत्मगौरव जगाने और विश्व में एक विशिष्ट पहचान स्थापित करने की प्रेरणा देता है। इस दृष्टि से विवेकानंद का सांस्कृतिक राष्ट्रवाद केवल अतीत का वैचारिक योगदान नहीं, बल्कि वर्तमान और भविष्य दोनों के लिए मार्गदर्शक सिद्धांत है, जो भारत को आत्मविश्वासी, समरस और सशक्त राष्ट्र बनाने में सहायक हो सकता है।

संदर्भ

1. गोलवलकर, एम. एस. (2005). सांस्कृतिक राष्ट्रवादए पुरुषवादी हिंदू धर्म और समकालीन हिंदुत्व। मुझे पुरुष बनाओ!: भारत में पुरुषत्वए हिंदू धर्म और राष्ट्रवादए 75.
2. सिल, एन. पी. (2004). स्वामी विवेकानंद और ऋषि बंकिमचंद्र देशभक्त और राष्ट्रवादी के रूप में: एक आलोचनात्मक तुलना। पूर्व-पश्चिम संबंध: एशियाई अध्ययन की समीक्षाए 4(1), 147-171.
3. पालित, पी. के. (2022). स्वामी विवेकानंद. आधुनिक भारतीय विचार का पुनर्मूल्यांकन: विषय और विचारक (पृष्ठ 73.100). सिंगापुर: स्प्रिंगर नेचर सिंगापुर.
4. शर्मा, एस., और सचदेवा, जी. (2016). समकालीन विश्व में एक राजनीतिक विचारक के रूप में स्वामी विवेकानंद की प्रासंगिकता। पुनरुत्थानशील भारत की आवाज़, 323.
5. प्रभानंदए एस. (2003). स्वामी विवेकानंद (1863.1902). संभावनाएँए 33(2):231.245.
6. कुमारए एस. (2019). साहित्य में राष्ट्रवाद. संपादकीय बोर्ड, 68.
7. बिस्वासए एच. के. (2021). स्वामी विवेकानंद: आधुनिक भारत के पथप्रदर्शक के रूप में. जर्नल होमपेज: www.ijrpr.com ISSN, 2582, 7421.
8. बेकरलेगए जी. (2013). स्वामी विवेकानंद (1863-1902). 150 वर्ष बाद: एक प्रभावशाली हिंदू गुरु का आलोचनात्मक अध्ययन. धर्म कम्पासए 7(10):444-453.1.
9. बेकरलेगए जी. (2006). स्वामी विवेकानंद और संघ परिवार: जनसंख्याए धर्म और राष्ट्रीय पहचान पर अभिसारी या भिन्न रायघ्ण उत्तर-औपनिवेशिक अध्ययन, 9(2), 121-135.
10. बैयरए के. (2019). स्वामी विवेकानंद. सुधारवादी हिंदू धर्म, राष्ट्रवाद और वैज्ञानिक योग. समकालीन समाज में धर्म और परिवर्तन पर अंतःविषय पत्रिका, 5(1), 230-257.
11. भुयानए पी. आर. (2003). स्वामी विवेकानंद: पुनरुत्थानशील भारत के मसीहा. अटलांटिक पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रिक्ट.
12. शिवकुमार, एम. वी. (2013). भारत के राष्ट्रीय एकीकरण में स्वामी विवेकानंद का योगदान (डॉक्टरेट शोध प्रबंध, डॉक्टरेट शोध प्रबंध, महात्मा गांधी विश्वविद्यालय, कोट्टायम, केरल, भारत). http://hdl.handle.net/10603/7074).
13. मेधानंदए एस. (2020). क्या स्वामी विवेकानंद एक हिंदू वर्चस्ववादी थे? एक लंबे समय से चली आ रही बहस पर पुनर्विचार। धर्म, 11(7), 368.
14. वेलास्सेरी, एस. (2021). विवेकानंद का सामाजिक दर्शन और भारतीय राष्ट्रवाद। ब्राउन वॉकर प्रेस।
15. लॉन्ग, जे. डी. (2017). हिंदू धर्म का राजनीतिकरण और राजनीति का हिंदूकरण: स्वामी विवेकानंद और महात्मा गांधी के परिवर्तनकारी दृष्टिकोणों के साथ हिंदू राष्ट्रवाद की तुलना। धर्मशास्त्र में राजनीति (पृष्ठ 75.92)। रूटलेज।
16. सरकार, एम. सी. (2021). स्वामी विवेकानंद के व्यावहारिक वेदांत दर्शन की अवधारणा और मानव विकास: एक विश्लेषणात्मक अध्ययन। अंतर्राष्ट्रीय बहुविषयक शैक्षिक अनुसंधान जर्नल, 1(5):17-20.